अध्याय 5

पादप रोग विज्ञान : परिभाषा एवं शब्दावली
(Plant Pathology : Definition and Terminology)

''पादप रोग विज्ञान'' की आधारशिला विज्ञान (Science) के रूप में उन्नीसवीं शताब्दी से प्रारम्भ मानी जाती है। सन् 1845 में आयरलैण्ड (यूरोप) में ''आलू की पछेती अंगमारी'' (Late blight of potato) रोग की वजह से आलू की फसल नष्ट होने से भयंकर अकाल पड़ा और भूख के कारण लगभग 12.5 लाख लोग मारे गये तथा 15 लाख लोग संयुक्त राज्य अमेरिका तथा अन्य देशों में गमन कर गये। इस अकाल (Famine) को ''आयरिश दुर्भिक्ष'' (Irish Famine) के नाम से जाना जाता है। इसी रोग की वजह से पादप रोग विज्ञान का जन्म हुआ माना जाता है।

फ्रांस में ''अंगूर के मृदुरोमिल आसिता रोग'' (Downy mildew of grapes) के संक्रमण की वजह से नष्ट हो रही अंगूर की फसल को बचाने हेतु सन् 1885 में प्रो. मिलार्डे (Prof. P.M.A. Millardet, 1885) ने ''बोर्डो मिश्रण'' (Bordeaux mixture) की खोज की। यह नीला थोथा, चूना एवं पानी का निश्चित अनुपात में बनाया गया एक कवक व जीवाणुनाशक मिश्रण है।

वर्ष 1943 में ''चावल के भूरे पर्णचित्ति रोग'' (Brown leaf spot of rice) द्वारा चावल की फसल नष्ट होने से भारत में भयंकर अकाल पड़ा, जिसको ''बंगाल का दुर्भिक्ष'' (Bengal famine) कहा जाता है, इस दुर्भिक्ष में लगभग 20 लाख लोग भूख से मारे गये। सन् 1944 में वैक्समेन (Waksman) ने स्ट्रेप्टोमाइसीन एन्टीबायोटिक की खोज की, जो पादप जीवाणु रोगों के नियन्त्रण हेतु बहुत लाभप्रद रही है। सन् 1966 में प्रथम सर्वांगी कवकनाशी (Systemic fungicide) कार्बोक्सीन (Carboxin) की खोज श्मेलिंग एवं कुल्का (Schmeling and Kulka) ने की।

भारत में कवकों एवं उनसे उत्पन्न रोगों का विस्तृत अध्ययन ई.जे. बटलर (E.J. Butler) ने किया जिसके कारण उनको ''भारत में पादप रोग विज्ञान का जनक'' (Father of Plant Pathology in India) माना जाता है।

पादप रोग विज्ञान (Plant Pathology or Phytopathology) शब्द की उत्पत्ति ग्रीक भाषा के तीन शब्दों (i) फाइटोन – पादप (Phyton = Plant), (ii) पैथोज – रोग (Pathos = ailments), (iii) लॉगोस या लॉगस – अध्ययन (Logos or logus = to study) से हुई है, जिसका अर्थ पादप रोगों का अध्ययन करना होता है।

परिभाषा : ''पादप रोग विज्ञान, कृषि विज्ञान, वनस्पति या जीव विज्ञान की वह शाखा है जिसके अन्तर्गत पादप रोगों के कारणों, हेतुकी, रोगों से हुई हानि तथा उनके नियन्त्रण के उपायों का अध्ययन किया जाता है।''

शब्दावली (Terminology) :

रोग (Disease) : ''रोग एक हानिकारक प्रक्रिया (Malfunctioning process) है जो निरन्तर उत्तेजना के कारण होता है जिसके परिणामस्वरूप कुछ पीड़ा उत्पन्न करने वाले लक्षण प्रकट होते हैं।'' उदाहरण – नींबू का कैंकर रोग।

रोगजनक (Pathogen) : ''रोग उत्पन्न करने वाले कारक को रोगजनक कहते हैं।'' उदाहरण – जैन्थोमोनास जीवाणु।

परजीवी (Parasite) : वह जीव, जो दूसरे जीव (Host) पर रहकर पोषण प्राप्त करता हुआ वृद्धि एवं गुणन करता है, उसे परजीवी कहते हैं। उदाहरण – फाइटोप्लाज्मा।

मृतजीवी (Saprophyte) : ऐसा जीव, जो अपना पोषण मृत कार्बनिक पदार्थों से प्राप्त करता है, उसे मृतजीवी कहते हैं। उदाहरण – म्यूकर कवक।

परपोषी (Host) : परजीवी को आश्रय देने वाला जीव अर्थात् एक जीवित जीव, जिस पर परजीवी (Parasite) आक्रमण

करता है तथा उससे अपना पोषण प्राप्त करता है, उसे परपोषी कहते हैं।

अतिवर्धन (Hyperplasia) : परपोषी की कोशिकाओं की ''संख्या में बढ़ोतरी'' के कारण होने वाली अत्यधिक वृद्धि को अतिवर्धन कहते हैं।

अतिवृद्धि (Hypertrophy) : परपोषी की कोशिकाओं के ''आकार में बढ़ोतरी'' के कारण होने वाली असाधारण वृद्धि को अतिवृद्धि कहते हैं।

अविकल्पी परजीवी (Obligate parasite) : ऐसा परजीवी जीव जो केवल अन्य जीवित जीव पर ही वृद्धि व गुणन करता है। जैसे – एल्बूगो।

ऊतकक्षय (Necrosis) : कोशिकाओं तथा ऊतकों की मृत्यु होना ही ऊतकक्षय कहलाता है।

हरिमाहीनता (Chlorosis) : पौधों के हरे भागों से पर्णहरित नष्ट होने के कारण पीला पड़ना हरिमाहीनता कहलाता है।

संचरण (Transmission) : रोगजनक का एक पौधे से दूसरे पौधे में स्थानान्तरण होना संचरण कहलाता है। उदाहरण – सफेद मक्खी द्वारा टमाटर के पर्ण कुन्चन विषाणु का संचरण।

संक्रमण (Infection) : परपोषी में रोगजनक का स्थापित होना संक्रमण कहलाता है।

लक्षण (Symptom) : एक रोग के कारण पौधे में होने वाली बाह्य एवं आन्तरिक प्रतिक्रियाओं या बदलावों को रोग के लक्षण कहते हैं। जैसे – पर्ण कुंचन रोग, हरिमाहीनता।

चिह्न (Sign) : पौधे के रोगग्रस्त भागों पर दिखाई देने वाला रोगजनक या उसके भाग ही रोग चिह्न कहलाते हैं। जैसे – छाछ्या एवं तुलासिता रोग।

निवेश–द्रव्य (Inoculum) : रोगजनक का वह भाग जो परपोषी पौधे के सम्पर्क में आता है तथा संक्रमण स्थापित करने योग्य होता है, उसे निवेश–द्रव्य / इनोकुलम कहते हैं।

वाहक (Vector) : वह प्राणी जो रोगजनक को एक स्थान से दूसरे स्थान पर संचारित करता है उसे वाहक या रोगवाहक कहते हैं। जैसे – सफेद मक्खी।

पाण्डुरता (Etiolation) : प्रकाश के अभाव या अन्धकार की वजह से पौधों का पीला पड़ना, पाण्डुरता कहलाता है।

एकान्तर परपोषी (Alternate host) : दो अलग – अलग जातियों के परपोषी पौधों में से वह एक पौधा, जो कुछ कवकों का जीवन चक्र पूरा करने के लिए आवश्यक होता है, उसे एकान्तर परपोषी कहते हैं। जैसे – *पक्सिनिया ग्रेमिनिस ट्रिटिसाई* कवक हेतु बारबरी झाड़ी।

कवकनाशी (Fungicide) : कोई भी पदार्थ (मुख्यत: रासायनिक यौगिक) जो कवक के लिए विषैला हो तथा कवक को मारने में सक्षम हो उसे कवकनाशी कहते हैं। जैसे – मैन्कोजेब, थायरम, कार्बेन्डाजिम इत्यादि।

पैथोवार (Pathovar = pv.) : जीवाणु की रोगजनक जाति का एक उप–विभाजन, जो केवल पौधे की एक निश्चित जाति या वंश को ही संक्रमित कर सकता है। जैसे – *जैन्थोमोनास एक्जोनोपोडिस पैथो. सिट्राई* केवल सिट्रस को ही संक्रमित कर सकता है।

रोगचक्र (Disease cycle) :: पौधे में रोग विकास में सम्मिलित घटनाओं का क्रम, जिसमें रोगजनक के विकास की विभिन्न अवस्थाएँ तथा परपोषी पर पड़ने वाला विपरीत प्रभाव शामिल है।

सर्वांगी (Systemic) : ऐसा रसायन या रोगकारक, जो अन्दर ही अन्दर पौधे के शरीर में फैलता है उसे सर्वांगी कहते हैं। जैसे – विषाणु रोगकारक एवं कार्बेन्डाजिम कवकनाशी।

प्रतिजैविक (Antibiotic) : एक सूक्ष्मजीव द्वारा उत्पन्न रासायनिक पदार्थ जो दूसरे सूक्ष्मजीवों के लिए हानिकारक होता है। जैसे – पैनिसिलिन।

फाइलोडी (Phyllody) : पुष्पीय भागों का पत्ती–सदृश संरचना (Leaf-like structure) में रूपान्तरण को फाइलोडी कहते हैं। जैसे – तिल का फाइलोडी रोग।

फसलों के प्रमुख रोगकारकों का सामान्य परिचय–कवक, जीवाणु, फाइटोप्लाज्मा, विषाणु

रोग उत्पन्न करने वाले कारकों को रोगजनक (Pathogen) कहते हैं। यह जैविक (Biotic) या मध्यजैविक (Mesobiotic) या अजैविक (Abiotic) हो सकते हैं। पादप रोगजनकों के निम्नलिखित समूह हैं :

(अ) कवक (Fungi)

(ब) जीवाणु (Bacteria)

(स) मोलीक्यूट्स (Mollicutes : Phytoplasma एवं Spiroplasma)

(द) विषाणु (Viruses)

(य) वाइरॉइड्स (Viroids)

(र) सूत्रकृमि (Nematodes)

(ल) प्रोटोजोआ (Protozoa)

(व) शैवाल (Algae)

(श) अजैविक कारक (Abiotic factors)

उपर्युक्त रोगजनकों में से कवकों, जीवाणुओं,

फाइटोप्लाज्मा एवं विषाणुओं का सामान्य परिचय निम्न प्रकार है :–

(अ) कवक (Fungi) :

"कवक यूकेरियोटिक, क्लोरोफिल रहित, बीजाणुधारी, एककोशिकीय या बहुकोशिकीय, शाखित, तन्तुमय सूक्ष्मजीव हैं, जिनकी कोशिका भित्ति काइटिन या सैलूलोज या दोनों की बनी होती है। सूक्ष्मजीव विज्ञान की वह शाखा जिसमें कवकों/मशरूम का अध्ययन किया जाता है, उसे कवकविज्ञान (Mycology) कहते हैं। पी.ए. माइकेली (P.A. Micheli) को माइकोलोजी का जनक (Father of Mycology) कहा जाता है।

सामान्य लक्षण (General characters) :

(i) आवास (Habitat) : सभी कवकों में पर्णहरित (Chlorophyll) का पूर्णतया अभाव होता है, अतः ये मृतोपजीवी (Saprophyte), सहजीवी (Symbionts), परजीवी (Parasite) अथवा परापरजीवी (Hyperparasite) के रूप में सर्वत्र पाये जाने वाले होते हैं।

(ii) थैलस (Thallus) : जड़, तना तथा पत्ती में अविभेदित संरचना को थैलस कहते हैं। कवक थैलस प्लाज्मोडियल (Plasmodial), अमीबीय (Amoeboid) या आभासी प्लाज्मोडियल (Pseudoplasmodial), एककोशिकीय या तन्तुमय (Filamentous) अर्थात कवकजालीय (Mycelial) होता है जो पटयुक्त या पटहीन होता है।

(iii) पोषण (Nutrition) : कवक परपोषित (Heterotrophic) एवं अवशोषी (Absorptive) होते हैं तथा इनमें अन्तःग्रहण (Ingestion) बहुत ही कम होता है।

(iv) कोशिका भित्ति (Cell wall) : अधिकांश कवकों की कोशिका भित्ति काइटिन (Chitin) की बनी होती है, परन्तु ऊमाइकोटा (*Oomycota*) संघ के कवकों में ये मुख्य रूप से सैलूलोज की बनी होती है।

(v) जनन (Reproduction) : ज्यादातर कवकों में जनन, अलैंगिक (Asexual) व लैंगिक (Sexual) विधियों द्वारा सम्पन्न होता है।

(vi) केन्द्रकीय स्थिति (Nuclear status) : कवकों में केन्द्रक सुविकसित होता है। पटहीन कवकों में बहुकेन्द्रकी (Multinucleate) दशा होती है जबकि पटयुक्त कवकों की कोशिका में एककेन्द्रकी या द्विकेन्द्रकी या बहुकेन्द्रकी दशा होती है।

(vii) जीवन चक्र (Life cycle) : कवकों का जीवन चक्र सरल (Simple) से जटिल (Complex) तक होता है।

कवकजाल (Mycelium) :

कवक का थैलस अनेक पतली धागे जैसी नलिकाकार (Tubular) संरचनाओं से बनता है, जिन्हें कवकतन्तु (Hyphae) कहते हैं। जब बहुत सारे कवक तन्तु इकट्ठे होकर एक जालनुमा संरचना का निर्माण करते हैं तब इन्हें कवकजाल (Mycelium) कहते हैं। ये कवकजाल पटहीन (Aseptate) या पटयुक्त (Septate) होते हैं। पटहीन (बिना पट) कवकजाल, जिसमें बहुत सारे केन्द्रक उपस्थित हों तो ऐसा कवकजाल पटहीन तथा ऐसी अवस्था संकोशिकी (Coenocytic) कहलाती है, जैसे – ऊमाइसिटिज वर्ग।

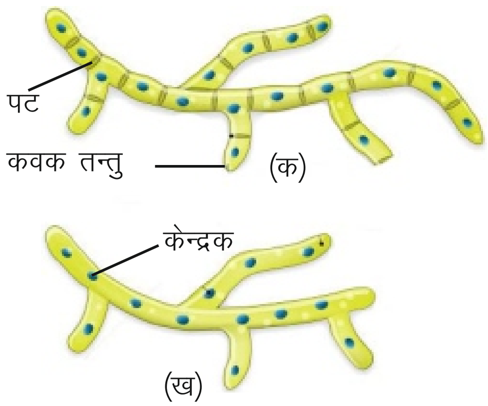

चित्र 5.1 : कवक के कवकतन्तु
(क) पटयुक्त (ख) पटहीन/संकोशी कवकतन्तु

यदि कवकतन्तु को आडी भित्तियाँ (Cross walls), जो पट (Septum) कहलाती हैं, छोटी–छोटी कोशिका के समान खण्डों में विभाजित कर देती हैं, तब यह पटयुक्त (Sepate) कवकतन्तु कहलाते हैं। जैसे– एस्कोमाइसीट्स एवं बेसिडियोमाइसीट्स।

कवक कोशिका (The Fungal Cell) :

कवक की कोशिका सुविकसित केन्द्रक युक्त (Eukaryotic) होती है जो कोशिका भित्ति (Cell wall), कोशिका झिल्ली (Cell membrane), कोशिका द्रव्य (Cytoplasm) एवं कोशिकांग (Organelles) से मिलकर बनी होती है। कोशिका द्रव्य में विभिन्न कोशिकांग जैसे – केन्द्रक (Nucleus), केन्द्रिका (Nucleolus), सूत्रकणिका (Mitochondria), अन्तर्द्रव्यी जालिका (Endoplasmic reticulum), राइबोसोम्स (Ribosomes), रसधानियाँ (Vacuoles), लाइसोसोम्स (Lysosomes), पुटिकाएँ (Vesicles), जालिकाय (Dictyosomes) इत्यादि उपस्थित होते हैं। रासायनिक रूप से कवक कोशिका में कार्बोहाइड्रेट्स (Carbohydrates), प्रोटीन्स (Proteins), लिपिड्स (Lipids), न्यूक्लिक अम्ल (DNA एवं RNA) इत्यादि की उपस्थिति होती है। कोशिका द्रव्य में 80S तथा माइटोकॉन्ड्रिया में 70S के राइबोसोम्स होते हैं। राइबोसोम्स, प्रोटीन्स एवं RNA के बने होते हैं। कोशिका में ग्लाइकोजन (Glycogen), वसा एवं

तेलों (Oils), भोज्य पदार्थ के रूप में संचित (Stored) रहते हैं।

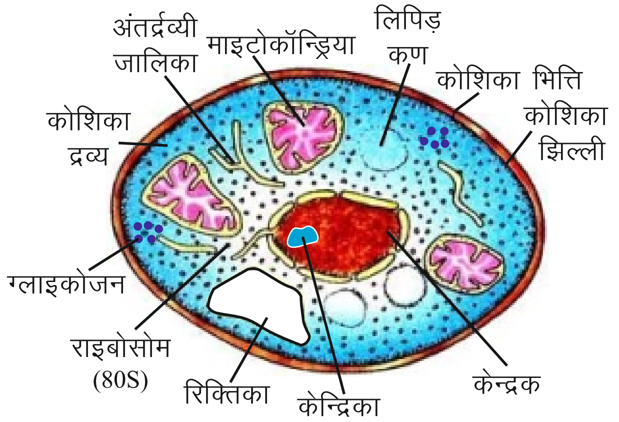

चित्र 5.2 : कवक कोशिका का प्रारूप

कवकों में पोषण की विधियाँ (Modes of nutrition) :

पर्णहरित न होने के कारण कवक अपना भोजन स्वयं नहीं संश्लेषित कर सकते तथा दूसरे स्रोतों पर निर्भर रहते हैं, इसलिए ये परपोषित (Heterotrophic) होते हैं। कवक घुलनशील पदार्थों का अवशोषण (Absorption), कवकजाल की भित्ति एवं झिल्ली (Cell wall & cell membrane) अथवा कुछ कवकों में चूषकांगों (Haustoria) द्वारा अवशोषित करते हैं।

पोषण प्राप्ति के आधार पर कवकों को निम्न तीन प्रमुख वर्गों में बाँटा जा सकता है – (1) परजीवी (Parasites) (2) मृतजीवी (Saprophytes) एवं (3) सहजीवी (Symbionts)।

कवकों में पोषण

- परजीवी (Parasite) (जीवित जीवों से भोजन लेना)
  - (i) अविकल्पी परजीवी (Obligate parasite = Biotrophs)
  - (ii) विकल्पी मृतजीवी (Facultative Saprophyte)
  - (iii) विकल्पी परजीवी (Facultative parasite)
- मृतजीवी (Saprophyte) (मृत पदार्थों से भोजन लेना)
- सहजीवी (Symbiont) (मिलजुल कर जीवन यापन करना)
  - (i) लाइकेन (Lichen)
  - (ii) माइकोराइजा (Mycorrhiza)

(1) परजीवी (Parasite) : वे कवक जो अपना भोजन जीवित जीवों से प्राप्त करते हैं परजीवी कहलाते हैं। इनको तीन भागों में बाँटा गया हैं :–

(क) अविकल्पी परजीवी (Obligate Parasites) : वो परजीवी, जो अपना सम्पूर्ण जीवनकाल दूसरे जीवित जीवों पर ही व्यतीत करते हैं। इनको प्रयोगशाला में कृत्रिम माध्यम पर नहीं उगाया जा सकता है। उदाहरण – *एल्बूगो (Albugo)*, *एरीसाइफी (Erysiphe)*, *स्क्लेरोस्पोरा (Sclerospora)*, *पक्सीनिया (Puccinia)* इत्यादि।

(ख) विकल्पी मृतजीवी (Facultative Saprophytes) : (Facultative means - ability or power) वास्तव में ये कवक परजीवी होते हैं, परन्तु आवश्यकता पड़ने पर कुछ समय के लिए मृतजीवी की भाँति अपना भोजन प्राप्त कर सकते हैं। ये जीवित परपोषी (Host) के अलावा मृत पदार्थों पर भी अपना जीवन यापन कर लेते हैं। उदाहरण – *अस्टीलागो (Ustilago)*, *टेफ्रीना (Taphrina)* इत्यादि।

(ग) विकल्पी परजीवी (Facultative Parasite) : मुख्य रूप से ये कवक मृतजीवी होते हैं, परन्तु कुछ परिस्थितियों में यह परजीवी के रूप में भी रह सकते हैं। उदाहरण – *फ्यूजेरियम (Fusarium)*, *पीथियम (Pythium)*, *ऑल्टरनेरिया (Alternaria)*, *सर्कोस्पोरा (Cercospora)* इत्यादि।

(2) मृतजीवी (Saprophytes) : वे कवक जो अपना भोजन मृत कार्बनिक पदार्थों से प्राप्त करते हैं, मृतजीवी कहलाते हैं। उदाहरण– *म्यूकर (Mucor)*, *एगेरीकस (Agaricus)* इत्यादि।

(3) सहजीवी (Symbionts) : वो कवक जो अन्य जीवों के साथ मिलकर जीवन व्यतीत करते हैं तथा एक दूसरे को लाभ पहुँचाते हैं। जीवन जीने की यह कला सहजीवन (Symbiosis) कहलाती है तथा भाग लेने वाले जीवों को सहजीवी (Symbionts) कहते हैं। उदाहरण – लाइकेन, माइकोराइजा आदि।

(क) लाइकेन (Lichen) : ''कवक' + 'शैवाल'' (Fungus + Alga) या ''कवक' + 'सायनोबैक्टीरिया'' (Fungus + Cyanobacterium) के सहजीवन को लाइकेन कहते हैं। सहजीवन की इस जीवन लीला में एक कवकजीव (Mycobiont = कवक) तथा दूसरा प्रकाशजीव (Photobiont

शैवाल या साइनोबैक्टीरियम) एक साथ मिलकर जीवन जीते हैं। प्रकाशजीव को पहले, शैवालांश (Phycobiont) के नाम से जानते थे। शैवाल या सायनोबैक्टेरियम को कवक से कुछ खनिज, जल एवं कार्बनिक पदार्थ प्राप्त होते हैं तथा कवक को पोषक देकर बदले में शैवाल से कार्बोहाइड्रेट प्राप्त होता है। लाइकेन प्रदूषित क्षेत्रों में नहीं उगते, इसलिए ये प्रदूषण के बहुत अच्छे सूचक (Pollution Indicator) भी हैं।

(ख) माइकोराइजा (Mycorrhiza) : सन् 1885 में फ्रेंक **(Frank)** ने ''माइकोराइजा'' की खोज की थी। ''माइकोराइजा'' शब्द, ''माइक्स'' (Mykes = Fungus) तथा ''राइजा'' (Rhiza = Root) से मिलकर बना है। ''कवक एवं उच्च पादपों की जड़ों में सहजीवन को माइकोराइजा कहते हैं।''

इस सहजीवन से कवकों को कार्बोहाइड्रेट्स मिलती है जबकि पादपों को P एवं N उपलब्ध करवाने के साथ–साथ सूखा एवं रोगों के प्रति लड़ने की क्षमता भी प्रदान करते हैं। उदाहरण– ग्लोमस (*Glomus*) कवक का सम्बन्ध पाइन्स, फर, यूकेलिप्टस इत्यादि की जड़ों के साथ।

कवकों का वर्गीकरण (Classification of fungi) :

वर्गीकरण विज्ञान (Taxonomy) के जनक माने जाने वाले लिनीयस (Linnaeus) ने कवकों को वनस्पति जगत (Plant Kingdom) में रखा था। लेकिन वर्ष 1969 में व्हिटेकर (Whittaker) ने जीवित जीवों के लिए ''पाँच जगत वर्गीकरण'' (Five Kingdom Classification) दिया एवं कवकों को ''फंजाई'' (Fungi) जगत में रखा। पी.ए. सकार्डो (P.A. Saccardo, 1886) ने कवकों को उनके कवकजाल में पटों (पटयुक्त एवं पटहीन) एवं लैंगिक जनन के आधार पर चार वर्गों (Classes), जैसे – फाइकोमाइसिटीज (Phycomycetes), एस्कोमाइसिटीज (Ascomycetes), बेसिडियोमाइसिटीज (Basidiomycetes) एवं ड्यूटेरोमाइसिटीज (Deuteromycetes) में विभक्त किया, जिनका संक्षिप्त विवरण निम्न प्रकार है :–

क्र. सं.	वर्ग **(Class)**	कवकजाल	लैंगिक बीजाणु **(Sexual spore)**	उदाहरण
1.	फाइकोमाइसिटीज	पटहीन, शाखित	निषिक्ताण्ड (Oospore) या जाइगोबीजाणु (Zygospore)	एल्बूगो, स्क्लेरोस्पोरा, राइजोपस
2.	एस्कोमाइसिटीज	पटयुक्त, शाखित	एस्कोबीजाणु (Ascospore)	क्लेविसेप्स, एरीसाइफी
3.	बेसिडियोमाइसिटीज	पटयुक्त, शाखित	बेसिडियोबीजाणु (Basidiospore)	पक्सीनिया, अस्टीलागो
4.	ड्यूटेरोमाइसिटीज	पटयुक्त, शाखित	लैंगिक बीजाणु का अभाव। अलैंगिक बीजाणु कोनिडिया	ऑल्टरनेरिया, सर्कोस्पोरा, फ्यूजेरियम

आधुनिक युग में त्वरित एवं उच्च परिणाम देने वाले उपकरणों एवं आणविक अनुसंधानों के बाद कवकों के वर्गीकरण में कई नवीन बदलाव आ गए हैं। सभी जीवित जीवों को वोइज एवं सहयोगियों (Woese *et. al.*, 1990) ने 16S rRNA या 18S rRNA के आधार पर तीन डोमेन (Domain) (i) आरकीया (*Archaea*), (ii) बैक्टीरिया (*Bacteria*) एवं (iii) यूकेरिया (*Eukarya*) में विभक्त कर कवकों को डोमेन – यूकेरिया के अन्तर्गत, तीन जगत (*Fungi*, *Chromista* and *Protozoa*) में सम्मिलित किया है। किर्क एवं सहयोगियों (Kirk *et. al.*, 2008) द्वारा प्रस्तुत कवकों का नवीन वर्गीकरण – ''एंसवर्थ एण्ड बिस्बीज डिक्शनरी ऑफ फन्जाई'' (Ainsworth & Bisby's Dictionary of Fungi, 10^{th} Edition, 2008) नाम पुस्तक में प्रस्तुत किया गया है जो उच्च कक्षाओं में प्रचलित है।

पौधों में रोग उत्पन्न करने वाले प्रमुख कवक वंश (Fungal genera) निम्न प्रकार हैं – एल्बूगो (*Albugo*), स्क्लेरोस्पोरा (*Sclerospora*), फाइटोफ्थोरा (*Phytophthora*), क्लेविसेप्स (*Claviceps*), एरीसाइफी (*Erysiphe*), पक्सीनिया (*Puccinia*), अस्टीलागो (*Ustilago*), ऑल्टरनेरिया (*Alternaria*), फ्यूजेरियम (*Fusarium*), सर्कोस्पोरा (*Cercospora*), कोलेटोट्राइकम (*Colletorichum*) एवं राइजोक्टोनिया (*Rhizoctonia*) इत्यादि हैं। कई लाभदायक कवकों को बैकरी एवं शराब में (जैसे – सैकेरोमाइसीज *Saccharomyces* एककोशिकीय यीस्ट) तथा सुपाच्य एवं उच्च प्रोटीन हेतु खाद्य मशरूमों को काम लिया जा रहा है, जैसे – बटन मशरूम (*Agaricus*)। इसी तरह पादप रोगों के नियन्त्रण हेतु मित्र फफूंद (ट्राइकोडर्मा *Trichoderma*) का उपयोग किया जा रहा है।

(ब) जीवाणु (Bacteria) :

''जीवाणु प्रोकेरियोटिक, एककोशिकीय सूक्ष्मजीव होते हैं जो कोशिका भित्ति से घिरे होते हैं तथा द्विखण्डन द्वारा विभाजित होते हैं।''

सर्वप्रथम जीवाणुओं की खोज इंग्लैण्ड के वैज्ञानिक

ल्यूवेनहॉक (Leeuwenhoek) ने 1676 में की तथा "एनीमलक्यूल्स" (Animalcules) नाम रखा। सबसे पहले जीवित कोशिका (Living cell) की खोज का श्रेय भी इन्हीं को जाता है।

सर्वप्रथम सन् 1878 में टी.जे. बरिल (T.J. Burrill) ने जीवाणु जनित पादप रोग "नाशपाती के दग्ध अंगमारी रोग" (Fire blight of pear) की खोज की। यह रोग *इरविनिया एमाइलोवोरा* (*Erwinia amylovora*) नामक जीवाणु से उत्पन्न होता है।

जीवाणुओं के गुण (Characteristics of bacteria) :

1. जीवाणु एककोशिकीय सूक्ष्मजीव होते हैं जिनमें सुविकसित केन्द्रक नहीं होता है, इसलिए इन्हें प्रोकेरियोट की श्रेणी में रखा गया है।
2. जीवाणु की कोशिका भित्ति "पेप्टीड़ोग्लाइकन/म्यूरीन" (Peptidoglycan/ murein) की बनी होती है।
3. इनमें ऊर्जा उत्पादन हेतु माइटोकॉन्ड्रिया नहीं होता, लेकिन "मिजोसोम" (Mesosome) श्वसन स्थल (Respiration site) का कार्य करता है।
4. प्रत्येक जीवाणु कोशिका में एन्जाइम, न्यूक्लिक अम्ल (DNA and RNA), प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट्स, लिपिड्स इत्यादि होते हैं। वृत्ताकार, स्वतन्त्र एवं द्विरज्जु डी.एन.ए. (ds DNA) होता है।
5. जीवाणु कोशिका में प्रोटीन संश्लेषण हेतु राइबोसोम्स (Ribosomes) होते हैं। राइबोसोम्स 70S (उप इकाइयाँ 30S एवं 50S) का अवसादन गुणांक रखते हैं। ये लगभग 40 प्रतिशत प्रोटीन एवं 60 प्रतिशत आर.एन.ए. के बने होते हैं। राइबोसोम की छोटी इकाई (30S) का 16S राइबोसोमल आर.एन.ए. (16S rRNA) आजकल प्रचलित वर्गीकरण का प्रमुख आधार है।
6. कुछ जीवाणुओं में आनुवंशिक डी.एन.ए. के अतिरक्त एक या एक से अधिक वृत्ताकार डी.एन.ए. अणु होता है, जिसे प्लाज्मिड़ (Plasmid) कहते हैं।
7. ज्यादातर पादप रोग करने वाले जीवाणु ग्राम निगेटिव (Gram -ve) होते हैं, जैसे – जैन्थोमोनास, स्यूडोमोनास, इरविनिया लेकिन कुछ ग्राम पोजिटिव (Gram +ve) भी होते हैं, जैसे – क्लेवीबेक्टर, स्ट्रेप्टोमाइसिज।

जीवाणु कोशिकाओं की आकारिकी (Morphology of bacterial cells) :

अधिकतर जीवाणु कोशिकाएँ छड़ाकार (Rod shaped) होती हैं, जो 2 से 25 µm लम्बी व 0.5 µm चौड़ी होती है। जीवाणु कोशिकाएँ अनेक आकार वाली होती हैं, लेकिन इन्हें मुख्यतः चार भागों में बाँटा गया हैं – गोलाकार (Cocci), छड़ाकार (Rod or bacilli), सर्पिलाकार (Spiral) एवं विब्रियो (Vibrio) (चित्र 5.3)।

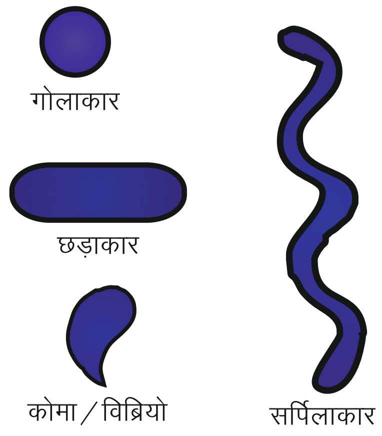

चित्र 5.3 : जीवाणु कोशिकाओं का आकार

(1) गोलाकार (Coccus, pl. Cocci) : इस प्रकार की जीवाणु कोशिकाएँ गोल होती हैं। इस समूह के जीवाणु एक क्रम में व्यवस्थित रहते हैं जो निम्न प्रकार के होते हैं:–

(क) माइक्रोकोकस (Micrococcus) : प्रत्येक जीवाणु कोशिका अलग अलग रहती है (चित्र 5.4), जैसे *माइक्रोकोकस* (*Micrococcus* sp.)।

(ख) डिप्लोकोकस (Diplococcus) : ऐसे जीवाणुओं की कोशिकाएँ दो–दो के जोड़ों में रहती हैं, जैसे – *डिप्लोकोकस निमोनी* (*Diplococcus pneumoniae*)।

(ग) स्ट्रेप्टोकोकस (Streptococcus) : ये जीवाणु माला की तरह श्रृंखला बनाकर रहते हैं, जैसे – *स्ट्रेप्टोकोकस लेक्टिस* (*Streptococcus lactis*)।

(घ) टेट्राड़ (Tetrad) : इसमें चार जीवाणु कोशिकाएँ चौरस समूह में रहती हैं, जैसे– *टेट्राकोकस* (*Tetracoccus* sp.)।

(ड़) सारसीना (Sarcina) : टेट्राड़ जीवाणु विभाजित होकर यदि पीछे चार गोलाणु ओर बना ले तथा इनकी संख्या 8, 64 या अधिक घनाकार पैकेट में हो, तब इन्हें सारसीना कहते हैं, जैसे – *सारसीना लूटिया* (*Sarcina lutea*)।

(च) स्टैफिलोकोकस (Staphylococcus) : गोल कोशिका विभाजित होकर अंगूर के गुच्छों के समान दिखाई देती है, जैसे– *स्टैफिलोकोकस ऑरियस* (*Staphylococcus aureus*) (चित्र 5.4)।

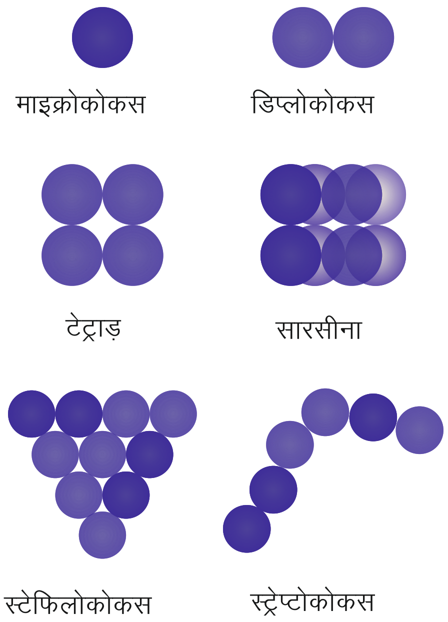

चित्र 5.4 : जीवाणु कोशिकाओं का व्यवस्थित क्रम

(2) छड़ाकार (Rod or Bacilli) : ज्यादातर पादप रोग करने वाले जीवाणु छड़ाकार होते हैं (चित्र 5.3), जैसे – *जैन्थोमोनास* (*Xanthomonas* sp.)।

(3) सर्पिलाकार (Spirillum) : जीवाणु कोशिकाओं का आकार सर्पिलरूप में होता है (चित्र 5.3), जैसे – *स्पाइरिलम वोल्यूटान्स* (*Spirillum volutans*)।

(4) विब्रियो (Vibrio) : यह जीवाणु कोमा के आकार के घुमावदार होते हैं (चित्र 5.3), जैसे – *विब्रियो कॉलरी* (*Vibrio cholerae*)।

जीवाणु की संरचना (Structure of bacteria) :

जीवाणु कोशिका एक कठोर भित्ति द्वारा घिरी होती है। कोशिका भित्ति के बाहर एक पतली श्लेष्मा की परत (Slime layer) होती है। जब यह पतली परत फूलकर, एक निश्चित श्लेष्मी आवरण बना लेती है, तब इसे सम्पुटिका (Capsule) कहते हैं। कुछ जीवाणु कोशिकाओं की सतह पर पाइलीन (Pilin) प्रोटीन से निर्मित बारीक बाल सदृश संरचनाएँ पाई जाती है, जिनको पाइलाइ (Pili) कहते हैं। यह तरल माध्यमों पर एवं संयुग्मन (Conjugation) के समय कोशिकाओं को चिपकने में सहायता करती है। जीवाणु कोशिकाओं में जीनोम (Genome) गुणसूत्र के रूप में संगठित नहीं होता है, लेकिन इसका प्रतिनिधित्व एक वृत्ताकार, लम्बे डी.एन.ए. अणु द्वारा किया जाता है, जिसको न्यूक्लिओइड़ (Nucleoid) या जीनोफोर (Genophore) कहते हैं। जीवाणु कोशिका में मिजोसोम (Mesosome), राइबोसोम (Ribosomes), पुटिकाएँ (Vesicles) इत्यादि उपस्थित होते हैं (चित्र 5.5)।

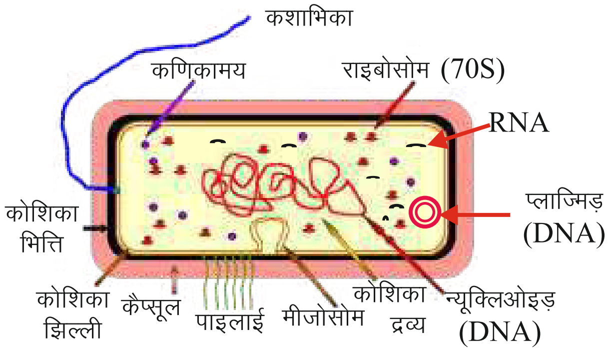

चित्र 5.5 : जीवाणु कोशिका

जीवाणु कोशिका के कुछ मुख्य अंगों का वर्णन निम्न प्रकार हैं :–

(1) कशाभिका (Flagella) : कई जीवाणु गतिशील होते हैं। यह गति, कोशिका पर उपस्थित महीन तन्तु जैसी संरचना की वजह से प्राप्त होती है, जिसे कशाभिका (Flagella) कहते हैं। यह कशाभिका फ्लैजिलिन (Flagellin) नामक प्रोटीन की बनी होती है। कुछ जीवाणुओं में कशाभिका अनुपस्थित होती है। कशाभिका विन्यास के आधार पर जीवाणुओं को निम्न भागों में बाँटा जा सकता है (चित्र 5.6) :–

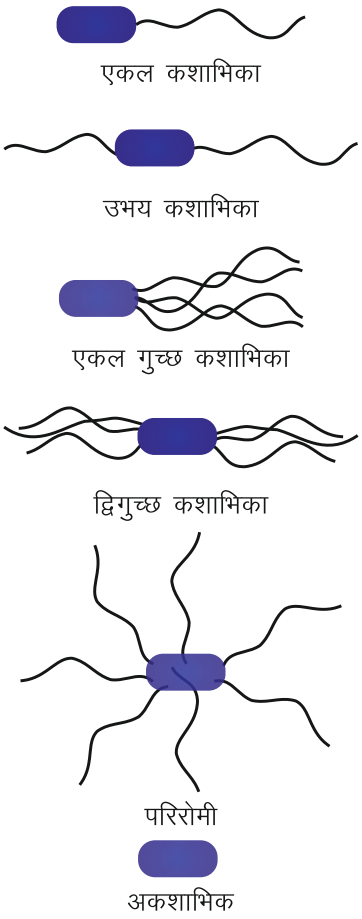

चित्र 5.6 : जीवाणुओं में कशाभिका विन्यास

(क) एकल कशाभिक (Monotrichous) : ऐसी जीवाणु कोशिकाएँ जिनके केवल एक सिरे पर एक कशाभिका पाई जाती है, उन्हें एकल कशाभिक कहते हैं (चित्र 5.6), जैसे – विब्रियो व जैन्थोमोनास।

(ख) उभय कशाभिक (Amphitrichous) : जब जीवाणु कोशिका के दोनों सिरों पर एक–एक कशाभिका उपस्थित हो, तो ऐसी कोशिका उभयकशाभिक कहलाती है, जैसे– स्यूडोमोनास की कई जातियाँ, नाइट्रोसोमोनास (*Nitrosomonas*)।

(ग) एकल गुच्छ कशाभिक (Cephalotrichous) : जब जीवाणु कोशिका के एक सिरे पर अनेक कशाभिकाएँ उपस्थित हो, जैसे *स्यूडोमोनास फ्लोरसेन्स* (*Pseudomonas fluorescenes*), माइकोबैक्टिरियम (*Mycobacterium*)।

(घ) द्विगुच्छ कशाभिक (Lophotrichous) : जब जीवाणु कोशिका के दोनों सिरों पर अनेक कशाभिकाएँ मौजूद हों, जैसे– स्पाइरिलम (*Spirillum*) एवं सालमोनेला (*Salmonella*)।

(च) परिरोमी (Peritrichous) : जब जीवाणु कोशिका के चारों ओर कशाभिकाएँ उपस्थित हों, जैसे– इरविनिया (*Erwinia*) एवं एस्चेरिचिया (*Escherichia*)।

(छ) अकशाभिक (Atrichous) : बिना कशाभिक जीवाणु कोशिका को अकशाभिक कहते हैं, जैसे – *माइक्रोकोकस वंश* की जातियाँ (*Micrococcus* sp.)।

(2) कोशिका भित्ति (Cell Wall) : जीवाणु की कोशिका भित्ति पेप्टीड़ोग्लाइकन/म्यूरीन (Peptidoglycan / murein) की बनी होती है। भित्ति का मुख्य कार्य जीवाणु कोशिका को दृढ़ता एवं आकृति प्रदान करना है। इसके अलावा यान्त्रिक एवं रासायनिक आघातों से बचाने का काम भी करती है।

सन् 1884 में एच.सी. ग्राम (H.C. Gram) ने जीवाणु कोशिकाओं को अभिरन्जन (Staining) के आधार पर दो भागों– (i) ग्राम ग्राही (Gram positive) एवं (ii) ग्राम अग्राही (Gram negative) में बाँटा, जिनका तुलनात्मक अन्तर निम्न प्रकार हैं :

ग्राम–ग्राही (G+ve)	ग्राम–अग्राही (G-ve)
(1) इनकी कोशिका भित्ति मोटी होती है।	(1) इनकी कोशिका भित्ति पतली होती है।
(2) कोशिका भित्ति एकस्तरीय (Single layered) होती है।	(2) कोशिका भित्ति द्विस्तरीय (Double layered) होती है।
(3) कोशिका भित्ति में पेप्टीडोग्लाइकन/म्यूरीन अधिक (40-90%) होता है।	(3) कोशिका भित्ति में पेप्टीडोग्लाइकन/म्यूरीन कम (1-10%) होता है।
(4) टीकॉइक अम्ल (Teichoic acid) उपस्थित होता है।	(4) टीकॉइक अम्ल अनुपस्थित होता है।
(5) कोशिका भित्ति में लिपिड़ बहुत कम मात्रा में होता है।	(5) लिपिड़ अधिक मात्रा में होता है।
(6) बहुत कम पादप रोगजनक जीवाणु इस समूह से संबंधित है।	(6) अधिकांश पादप रोगजनक जीवाणु इस समूह से सम्बन्धित होते हैं।
(7) उदाहरण : क्लेवीबेक्टर, स्ट्रेप्टोमाइसीज, बैसिलस इत्यादि।	(7) उदाहरण : जैन्थोमोनास, स्यूडोमोनास, इरविनिया आदि

(3) कोशिका झिल्ली (Cell membrane) :

यह झिल्ली कोशिका भित्ति से घिरी होती है। यह फॉस्फोलिपिड्स, प्रोटीन एवं कुछ पॉलीसैकेराइड्स से मिलकर बनी होती है। यह घुले हुए आहार पदार्थो को कोशिका के अन्दर आने तथा व्यर्थ पदार्थों को कोशिका से बाहर निकालने का काम करती है।

(4) कणिका (Granules) :

यह कोशिका द्रव्य में कुछ संरक्षित पदार्थ होते हैं, जो पॉलीसैकेराइड्स, लिपिड्स आदि से मिलकर बने होते हैं तथा ऊर्जा उत्पादन हेतु यह खाद्य पदार्थों को संरक्षित रखते हैं।

(5) न्यूक्लिक अम्ल (Nucleic acid) :

जीवाणुओं में आनुवांशिक पदार्थ द्विरज्जु डी.एन.ए. (dsDNA) होता है जो हिस्टोन प्रोटीन रहित होता है तथा केन्द्रक झिल्ली से आबध नहीं होता है। प्रोटीन संश्लेषण हेतु कोशिका में आर.एन.ए. भी मौजूद होते हैं।

(6) प्लाज्मिड़ (Plasmid) :

कुछ जीवाणु प्रजातियों में गुणसूत्रीय डी.एन.ए. के अतिरिक्त एक या अधिक वृत्ताकार द्विरज्जु डी.एन.ए. अणु ओर होते हैं, जिन्हें प्लाज्मिड़ कहते हैं। यह कोशिका को प्रतिजैविकों (Antibiotics) के विरूद्ध लड़ने की क्षमता प्रदान करते हैं।

(7) मध्यकाय (Mesosome) :

जीवाणु कोशिका की कोशिका झिल्ली, अन्दर की तरफ अन्तर्वलित होकर (Infolding) वायुकोश जैसी संरचना (Vesicular like structure) बना लेती है, उसे मीजोसोम कहते हैं। यह जीवाणुओं में माइटोकॉन्ड्रिया का कार्य करता है अर्थात् श्वसन एवं ऊर्जा उत्पादन का कार्य करता है। साथ ही कोशिका विभाजन के समय पट निर्माण एवं डी.एन.ए. पुनरावृत्ति में मदद करता है।

जीवाणुओं का वर्गीकरण (Classification of Bacteria) :

जीवाणुओं का वर्गीकरण डी.एच. बर्गी (D.H. Bergey) ने ''बर्गीज मैनुअल ऑफ डिटर्मिनेटिव बैक्टीरियोलोजी'' (Bergey's Manual of Determinative Bacteriology) में दिया था जिसका प्रथम संस्करण सन् 1923 में प्रकाशित हुआ था। इस मैनुअल का नाम सन् 1984 में बदलकर ''बर्गीज मैनुअल ऑफ सिस्टेमैटिक बैक्टीरियोलोजी'' (Bergey's Manual of Systematic Bacteriology) कर दिया गया, जो कि आज पूरी दुनिया में जीवाणु वर्गीकरण हेतु एक संदर्भित पुस्तक (Reference book) है।

प्रोकेरियोटिक जीवों को वोइज एवं सहयोगियों (Woese *et al.*, 1990) ने दो डोमेन (Domain) - (i) आर्कीया (*Archaea*) एवं (ii) बैक्टीरिया (*Bacteria*) में वर्गीकृत किया है, जो कि 2004 में प्रकाशित ''बर्गीज मैनुअल ऑफ सिस्टेमैटिक बैक्टीरियोलोजी'' के द्वितीय संस्करण में उपलब्ध है। डोमेन – बैक्टीरिया को 24 संघों (Phyla) में उप–विभाजित किया है। वर्तमान में 32 से ज्यादा जीवाणु वंश ज्ञात हो चुके हैं जो पौधों में किसी न किसी प्रकार का रोग उत्पन्न करते हैं।

पौधों में रोग उत्पन्न करने वाले प्रमुख जीवाणु वंश (Genera) निम्न प्रकार हैं – जैन्थोमोनास (*Xanthomonas*), स्यूड़ोमोनास (*Pseudomonas*), राल्स्टोनिया (*Ralstonia*), इरविनिया (*Erwinia*), क्लेविबैक्टर (*Clavibacter*), स्ट्रेप्टोमाइसीज (*Streptomyces*) एवं एग्रोबैक्टीरियम (*Agrobacterium*)। पादपों से सम्बन्धित लाभदायक जीवाणुओं में राइजोबियम (*Rhizobium*) है, जो दलहनी (Legumes) फसलों की जड़ों में सहजीवन क्रियाओं द्वारा वायुमण्डलीय नाइट्रोजन का स्थिरीकरण करता है। एग्रोबैक्टीरियम में Ti प्लाज्मिड़ (Ti Plasmid) होता है तथा इस जीवाणु को आनुवांशिक अभियान्त्रिकी (Genetic engineering) में आनुवांशिक पदार्थ (Genetic material) को स्थानान्तरण करने में काम लिया जाता है। एग्रोबैक्टीरियम जीवाणु को ''प्रकृति का आनुवांशिक अभियन्ता'' (Nature's genetic engineer) कहते हैं।

(स) फाइटोप्लाज्मा (Phytoplasma)

सन् 1967 में जापानी वैज्ञानिक डोई एवं उसके सहयोगियों (Doi *et. al.*, 1967) ने बताया कि माइकोप्लाज्मा जैसे कुछ एककोशिकीय सूक्ष्म जीव हैं जो पौधों में भी रोग उत्पन्न करते हैं। इन सूक्ष्म जीवों को उन्होंने ''माइकोप्लाज्मा–सदृश जीव'' (Mycoplasma-like organisms = MLOs) नाम दिया। वर्ष 1994 में अकुण्डलित (Non-helical) MLOs का नाम बदलकर फाइटोप्लाज्मा (Phytoplasma) कर दिया गया।

परिभाषा : ''पौधों के फ्लोएम एवं कीटों में रहने वाले भित्ति रहित, एककोशिकीय, अकुण्डलित प्रोकेरियोटिक (Non-helical prokaryotic) सूक्ष्म जीवों को फाइटोप्लाज्मा कहते हैं।'' इनकी कोशिका का औसत व्यास 200 से 800 nm होता है। फाइटोप्लाज्मा अत्यधिक बहुरूपी (Pleomorphic) होते हैं जो एक त्रिस्तरों वाली कोशिका झिल्ली (Triple layered unit cell membrane) से घिरे होते हैं। इनकी कोशिका में द्विसूत्रक डीऑक्सी राइबोन्यूक्लिक अम्ल (dsDNA), राइबोन्यूक्लिक अम्ल (RNA), 70 S राइबोसोम्स इत्यादि होते हैं।

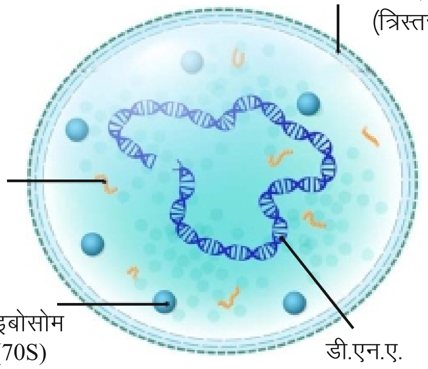

चित्र 5.7 : फाइटोप्लाज्मा कोशिका

इनकी वृद्धि के लिए स्टेरोल (Sterol) की आवश्यकता होती है। यह परपोषी पादप (Host plant) की फ्लोएम चालनी नलिकाओं में उपस्थित होते हैं। इनकी वृद्धि पर टेट्रासाइक्लिन नामक प्रतिजैविक का असर होता है, परन्तु ये पेनिसिलिन के प्रतिरोधी होते हैं। यह अविकल्पी परजीवी (Obligate parasite) होते हैं जिनको प्रयोगशाला में कृत्रिम माध्यम पर नहीं उगाया जा सकता। फाइटोप्लाज्मा के लिए नया वंश *''केन्डिडेटस फाइटोप्लाज्मा''* (*Candidatus* Phytoplasma) प्रतिपादित किया गया है। जिसको संक्षिप्त में *Ca.* Phytoplasma लिखते हैं। इस वंश को डोमेन–बैक्टीरिया (*Bacteria*), संघ फर्मिक्यूट्स (*Firmicutes*) तथा वर्ग – मोलिक्यूट्स (*Mollicutes*) के अन्तर्गत रखा गया है।

फाइटोप्लाज्मा द्वारा विश्व में लगभग 1000 पादप प्रजातियों में रोग उत्पन्न किया जाता है। फाइटोप्लाज्मा से होने वाले प्रमुख पादप रोगों में बैंगन का छोटी पत्ती रोग (Little leaf of brinjal), तिल का फाइलोडी (Sesamum phyllody), गन्ने का घासी प्रोरोह रोग (Grassy shoot disease of sugarcane) हैं।

आद्य जीवाणु/आर्कीबेक्टीरिया (Archaebacteria) :

आद्य जीवाणु एक विशेष प्रकार के जीवाणु होते हैं जो अत्यन्त कठिन आवासों जैसे– अधिक लवणीय क्षेत्रों (Halophiles), गर्म झरनों (Thermophiles), अम्लीय क्षेत्रों (Acidophiles) एवं अवायुवीय वातावरण (Methanogens) में पाये जाते हैं। इन जीवाणुओं की कोशिका भित्ति में पेप्टीड़ोग्लाइकन नहीं होता जबकि ''स्यूडोम्यूरिन'' (Pseudomurein) होता है जो इनको प्रतिकूल परिस्थितियों में जीवित रहने में सहायक होता है। मेथेनोजन (Methanogen) जीवाणु मुख्यतः दलदल तथा गाय व भैंस की आँतों में पाये जाते हैं। मेथेनोजन जीवाणु गोबर से मिथेन गैस उत्पादन के लिए उत्तरदायी हैं।

साएनोबेक्टीरिया (Cyanobacteria) :

नील हरित शैवाल (Blue green algae = BGA) को अब साएनोबेक्टीरिया कहते हैं। यह एककोशिकीय, प्रकाश संश्लेषी प्रोकेरियोटिक सूक्ष्मजीव हैं जिनमें पर्णहरित–ए के अतिरिक्त फाइकोसाइनिन वर्णक होता है। अधिकांश साएनोबेक्टीरिया नाइट्रोजन स्थिरीकरण (Nitrogen fixation) करके भूमि की उर्वरकता को बढ़ाते हैं। उदाहरण – एनाबीना (*Anabaena*), नॉस्टोक (*Nostoc*)।

(द) विषाणु (Virus) :

जर्मन वैज्ञानिक एडोल्फ मेयर (Adolf Mayer, 1886) ने तम्बाकू में एक रोग का वर्णन किया, जिसका नाम उसने मोजेक (Mosaic) रखा। उसने बताया कि रोगी पत्तियों का रस, स्वस्थ तम्बाकू के पौधों की पत्तियों में लगा देने पर मोजेक रोग के लक्षण प्रकट हो जाते हैं। इवानोवस्की (Ivanowski, 1892) ने सिद्ध किया कि तम्बाकू मोजेक रोग से ग्रसित पत्तियों का रस सबसे महीन जीवाणु – प्रूफ निस्यंदकों (Bacteria-proof filter) से छनने के बाद भी यह रस अपनी संक्रामकता बनाये रखता है। बीजेरिंक (Beijerinck, 1898) ने बताया कि तम्बाकू का मोजेक रोग एक सूक्ष्मजीव द्वारा न होकर, छनने (Filterable) एवं विसरण योग्य (Diffusible) तरल पदार्थ के द्वारा होता है, जिसको ''संक्रामक जीवित तरल'' (*Contagium vivum fluidum*) नाम देते हुए, ''विषाणु'' (Virus) कहा। उन्हें ''पादप विषाणु विज्ञान का जनक'' (Father of Plant Virology) कहा जाता है। सन् 1935 में स्टेनले (Stanley, 1935) ने तम्बाकू मोजेक विषाणु (Tabacco Mosaic Virus = TMV) को क्रिस्टल रूप में प्राप्त किया (Crystallization of TMV) तथा इस कार्य हेतु उनको 1946 में रसायन का नोबल पुरस्कार (Nobel prize) मिला।

परिभाषा : विषाणु अति सूक्ष्मदर्शीय कण होते हैं जो प्रोटीन द्वारा घिरे हुए एक अकेली जाति के न्यूक्लिक अम्ल (या तो आर.एन.ए. या डी.एन.ए., दोनों साथ कभी नहीं) से बने होते हैं। यह कण केवल जीवित परपोषी कोशिकाओं के अन्दर, कोशिका की मशीनरी का उपयोग कर गुणन (Replication) करते हैं।

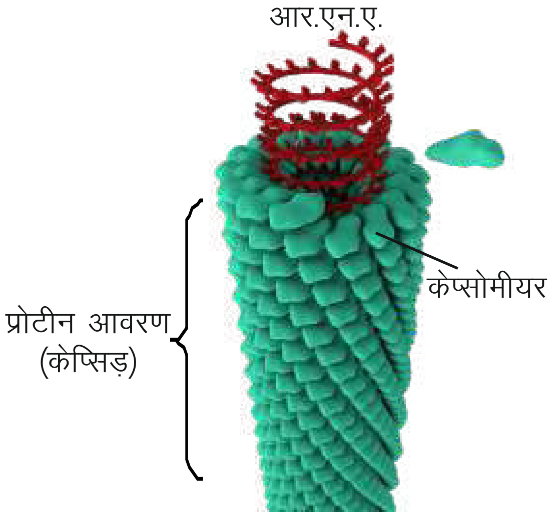

चित्र 5.8 : विषाणु कण (TMV)

विषाणु के गुण (Characterstics of virus) :

(1) परिपक्व विषाणु कण को विरियोन (Virion) कहते हैं।

(2) विषाणुओं में आनुवांशिक पदार्थ या तो डी.एन.ए. या आर.एन.ए. होता है जो प्रोटीन के आवरण से ढ़का होता है, जिसको कैप्सिड़ (Capsid) कहते हैं।

(3) ये अत्यधिक संक्रामक एवं ताप के प्रति संवेदनशील होते हैं।

(4) अधिकतर पादप विषाणुओं में आनुवांशिक पदार्थ आर.एन.ए. होता है (जैसे – TMV) लेकिन कुछ में डी.एन.ए. भी होता है (जैसे – कोलिफ्लावर मोजेक विषाणु Cauliflower Mosaic Virus)।

(5) विषाणुओं का ''न्यूक्लिक अम्ल'' संक्रमणकारी (Infective Part) होता है जबकि ''प्रोटीन'' सुरक्षा कवच (Protective coat) का कार्य करती है।

(6) विषाणु अकोशिकीय (Non-cellular) होते हैं, जो कि ''न्यूक्लियो–प्रोटीन'' (Nucleoprotein) के बने अति सूक्ष्म कण होते हैं।

(7) ये प्रोटीन संश्लेषण (Protein synthesis) हेतु परपोषी

कोशिका के राइबोसोम्स (Ribosomes) का उपयोग करते हैं।

(8) ये अविकल्पी परजीवी (Obligate parasite) होते हैं तथा जीवित कोशिकाओं के अन्दर ही अपना गुणन (Replication) करते हैं।

पादपों में विषाणु जनित प्रमुख रोगों में तम्बाकू मोजेक रोग, कपास का पर्ण कुंचन रोग, भिण्डी का पीत शिरा मोजेक रोग, मिर्च व टमाटर का पर्ण कुंचन रोग इत्यादि हैं।

जीवाणुभोजी (Bacteriophage = Eaters of bacteria) :

वह विषाणु जो जीवाणु कोशिकाओं को संक्रमित करते हैं, उन्हें जीवाणुभोजी कहते हैं। स्वतन्त्र रूप से सर्वप्रथम इनकी खोज ट्वोर्ट (Twort) ने 1915 एवं डी' हेरेल (d' Herelle) ने 1917 में की थी लेकिन ''जीवाणुभोजी'' (Bacteriophage) नाम 1917 में डी' हेरेल ने दिया था। गंगा नदी का पानी साफ रहने के लिए जीवाणुभोजी उत्तरदायी है।

(य) वाइरोइड़ (Viroid) :

सर्वप्रथम टी.ओ. डाइनर (T.O. Diener, 1971) ने वाइरोइड़ की खोज कर बताया कि ''आलू का तर्कु कन्द रोग'' (Potato spindle tuber disease) वाइरोइड़ द्वारा उत्पन्न होता है तथा उन्होंने ही ''वाइरोइड'' (Viroid) शब्द दिया। वाइरोइड़ का अर्थ होता है ''वायरस–जैसा'' (Virus-like)।

परिभाषा : ''अति सूक्ष्म, वृत्ताकार, सहसंयोजक रूप से बन्द (Covalently closed), निम्न अणुभार वाले, एकल सूत्रीय, नग्न राइबोन्यूक्लिक अम्ल (Naked ssRNA) के कण, जो पौधों में संक्रमण करके रोग उत्पन्न करते हैं, उन्हें वाइरोइड़ कहते हैं।

गुण :

(1) वाइरोइड्स में केवल वृत्ताकार एवं एकसूत्रीय आर.एन.ए. (ssRNA) नामक न्यूक्लिक अम्ल होता है।

(2) वाइरोइड्स में प्रोटीन का आवरण नहीं पाया जाता है।

(3) ये सबसे छोटे रोगजनक (Pathogen) हैं जो केवल पौधों में ही रोग उत्पन्न करते हैं। यह अविकल्पी परजीवी है।

वाइरोइड्स द्वारा होने वाले प्रमुख पादप रोगों में आलू का तर्कु कन्द रोग, नारियल का कडन्ग कडन्ग रोग (Cadang cadang disease) इत्यादि हैं।

(र) प्रीयोन (Prion) :

सन् 1982 में एस.बी. प्रूजीनर (S.B. Prusiner) ने ''भेड़ व बकरी के स्क्रेपी रोग'' में ''संक्रमणकारी प्रोटीन कण'' की खोज कर ''प्रीयोन'' (Prion) नाम रखा। इस कार्य हेतु उन्हें 1997 में नोबल पुरस्कार प्राप्त हुआ। प्रीयोन एक ''प्रोटीनमय संक्रामक कण'' (Proteinaceous infectious particle = PIP) है, जिसको ''स्लो वायरस'' (Slow virus) एवं ''पजलिंग प्रोटीन'' (Puzzling protein) के नाम से भी जाना जाता है।

अब तक ज्ञात सभी रोगजनकों में से प्रीयोन ही एक ऐसा रोगजनक है जिसमें ''न्यूक्लिक अम्ल'' नहीं होता है। इसके द्वारा मनुष्यों में ''कूरू'' एवं ''सी.जे.डी. (Creutzfeldt Jacob Disease) तथा पशुओं में ''स्क्रेपी'' एवं ''मैड़ काउ'' (Mad Cow) रोग उत्पन्न होते हैं। पौधों में इसके द्वारा अभी कोई रोग ज्ञात नहीं हुआ है।

विभिन्न प्रकार के रोगों के लक्षण (Symptoms of plant diseases) :

रोली या किट्ट (Rust) : ''रस्ट'' का अर्थ ''जंग लगना'' है। पौधे के वायवीय भागों (जैसे – पत्ती, तना, फल) पर उभरे हुए जंगदार स्फोटों (Rusty pustules) का प्रकट होना, रोली रोग के लक्षण हैं। सत्य रोली (True rust), बेसिडियोमाइकोटा के गण यूरेडिनेल्स (*Uredinales*) से संबंधित कवकों (जैसे – पक्सीनिया) द्वारा होती है। स्फोटों के रंग के आधार पर रोली कई प्रकार की होती है, जैसे – गेहूँ की काली रोली, पीली रोली एवं भूरी रोली।

कण्ड या कण्डवा (Smut) : ''स्मट'' का अर्थ ''कज्जली'' (Sooty) या ''कोयले–जैसा चूर्ण'' (Charcoal-like powder) होता है। पौधे के ग्रसित भागों पर काला चूर्ण बनना, कण्ड रोग के लक्षण है। अधिकांशतः यह काला चूर्ण पौधे के पुष्पीय भागों पर बनता है लेकिन कुछ फसलों में जड़, तना, पत्ती इत्यादि पर भी प्रकट होते हैं। कण्ड रोग, बेसिडियोमाइकोटा के गण अस्टीलेजिनेल्स (*Ustilaginales*) से संबंधित कवकों (जैसे – अस्टीलागो) द्वारा होता है। गेहूँ का अनावृत्त कण्ड (Loose smut), जौ का आवृत कण्ड (Covered smut) इत्यादि कण्ड रोग के उदाहरण हैं।

मृदुरोमिल आसिता (Downy mildew) : पत्तियों की निचली सतह पर ''कपासी कवकीय वृद्धि'' (Cottony fungal growth) को मृदुरोमिल आसिता या तुलासिता कहते हैं। मृदुरोमिल आसिता रोग करने वाले कवक अविकल्पी परजीवी (Obligate parasite) होते हैं, जो ऊमाइकोटा के गण पेरोनोस्पोरेल्स (*Peronosporales*) से संबंधित कवकों (जैसे – स्क्लेरोस्पोरा) द्वारा होती है। उदाहरण – बाजरा व अंगूर की मृदुरोमिल आसिता।

चूर्णिल आसिता या छाछ्या (Powdery mildew) : मुख्यतः पत्तियों की ऊपरी सतह पर ''सफेद चूर्ण जैसी कवकीय वृद्धि'' (White powdery fungal growth) को चूर्णिल आसिता या छाछ्या कहते हैं। छाछ्या रोग करने वाले कवक अविकल्पी परजीवी होते हैं, जो एस्कोमाइकोटा के गण एरीसाइफेल्स (*Erysiphales*) से संबंधित कवकों (जैसे –

एरीसाइफी) द्वारा होता है। उदाहरण – मटर व बेर का छाछ्या रोग।

पत्ती धब्बा (Leaf spot) : जब पत्तियों की कोशिकाएँ एक सीमित क्षेत्र तक मर जाती हैं तथा मृत ऊतक भूरे या काले रंग के हो जाते हैं तो उनको पत्ती धब्बा कहते हैं। जैसे – मूँगफली का पत्ती धब्बा (टिक्का) रोग।

पर्ण कुंचन (Leaf curl) : पत्तियाँ विरूपित एवं स्थूल होने के कारण मेहराबदार एवं व्यावृत्त होकर सिकुड़ जाती हैं, तब इस प्रकार के लक्षण पर्ण कुंचन कहलाते हैं। जैसे – टमाटर व कपास का पर्ण कुंचन रोग।

उल्टा सूखा या शीर्षारंभी सूखा (Die-back) : जब पौधा या वृक्ष चोटी से शुरू होकर नीचे की तरफ सूखता हुआ आता है तब उल्टा सूखा कहलाता है। जैसे – मिर्च व नींबू का उल्टा सूखा रोग।

अंगमारी या झुलसा (Blight) : ''ब्लाइट'' शब्द का अर्थ ''झुलसना'' या ''जली आकृति'' (Brunt appearance) से है। पौधे के अंगों (जैसे – पत्ती, पुष्प, तना) की सामान्य एवं शीघ्र मृत्यु (General and rapid killing) होना अंगमारी या झुलसा कहलाता है। उदाहरण – आलू व टमाटर की अगेती व पछेती अंगमारी।

आर्द्रपतन या आर्द्रगलन (Damping off) : मृदा सतह के समीप, नवजात अर्थात् छोटे कोमल पौधों (Seedlings) का तना गलना तथा जमीन पर गिरना, आर्द्रगलन के लक्षण हैं। उदाहरण – टमाटर व मिर्च का आर्द्रगलन रोग।

गलन या विगलन या सड़न (Rot) : कवक एवं जीवाणुओं के संक्रमण से पौधे के कोमल ऊतकों का विघटन (Disintegration), मुलायम (softening) एवं बदरंग (Discoloration) होना, गलन कहलाता है। पादप अंगों पर आक्रमण के आधार पर सड़न कई प्रकार की हो सकती है, जैसे जड़ गलन (Root rot), फल गलन (Fruit rot), तना गलन (Stem rot) इत्यादि।

म्लानि या उकठा या मुरझान (Wilt) : पौधे के भागों का शिथिल होकर मुरझाना तथा अचानक सूख जाना म्लानि या उकठा कहलाता है। पौधे में पानी की कमी से पौधा मुरझा जाता है जिसके पीछे मूल तन्त्र की क्षति, जल संहवन वाहिनियों की आंशिक मुँहबन्धी इत्यादि या रोगजनक द्वारा स्रावित जहरीले पदार्थ इत्यादि म्लानि के कारण हो सकते हैं। उदाहरण – अरहर व कपास का म्लानि रोग।

चितेरी या मोजेक (Mosaic) : सामान्य हरे ऊतकों के साथ–साथ हल्के हरे या पीले धब्बों का अनियमित रूप से बिखरे हुए होना मोजेक कहलाता है। उदाहरण– तम्बाकू का मोजेक रोग।

फाइलोडी (Phyllody) : पुष्पीय भागों का पत्ती–सदृश संरचना (Leaf-like structure) में परिवर्तन फाइलोडी कहलाता है। उदाहरण – तिल का फाइलोडी रोग।

स्केब (Scab) : पौधे के अंगों पर खुरदरा एवं पपड़ी सदृश रोगग्रस्त क्षेत्र को स्केब कहते हैं। जैसे – सेब का स्केब रोग।

पादप रोग प्रबन्धन के सामान्य सिद्धान्त (General principles of plant disease management) :

विभिन्न रोगजनकों द्वारा उत्पन्न पादप रोगों का किफायती (Economic) नियन्त्रण करना, पादप रोग विज्ञान का प्रमुख उद्देश्य है। रोगों को उत्पन्न होने से रोकना, रोग फैलाने वाले रोगजनक के भागों (Inoculum) की संख्या को कम करना तथा रोगों द्वारा होने वाले नुकसान को कम करने वाले सभी रोकथाम के उपायों को ''रोग नियन्त्रण उपायों'' (Disease control measures) के नाम से जाना जाता है। लेकिन ''नियन्त्रण'' (Control) शब्द अन्तिम स्थिति का भाव उत्पन्न करता है, अर्थात् जैसे किसी समस्या का अन्त हो गया हो। जबकि वास्तव में पादप रोग पूरी तरह समाप्त नहीं हो पाते हैं। अतः ''रोग नियन्त्रण'' (Disease control) शब्द के स्थान पर ''रोग प्रबन्धन'' (Disease management) शब्द का प्रयोग करना वास्तव में उपयुक्त एवं तर्कसंगत लगता है। दूसरी ओर ''प्रबन्धन'' (Management) शब्द एक निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया की धारणा को प्रतिपादित करता है। ''प्रबन्ध'' केवल रोगजनकों के उन्मूलन के सिद्धान्त पर ही आधारित नहीं है अपितु रोगों द्वारा होने वाली क्षति को कम करने या इसको एक आर्थिक हानि स्तर (Economic injury level) से नीचे रखने या इस स्तर से ऊपर रोग के उत्पन्न होने को कम करने के सिद्धान्त पर आधारित है। वास्तव में ''रोग प्रबन्धन'' फसलों के उत्पादन में निरन्तर समायोजन की आवश्यकता का सुझाव देता है। अतः ''रोग नियन्त्रण'' शब्द के स्थान पर ''रोग प्रबन्धन'' शब्द का प्रयोग करना तर्कसंगत है।

सबसे पहले व्हेटजल (Whetzel, 1929) ने पादप रोग नियन्त्रण के सिद्धान्तों को चार भागों–: (i) बहिष्करण (Exclusion), (ii) उन्मूलन (Eradication), (iii) बचाव (Protection) एवं (iv) प्रतिरक्षण (Immunization) में विभाजित किया। लेकिन पादप रोग प्रबन्धन में उन्नति एवं नये विकसित किये गए उपायों को स्थान देने के लिए इनमें दो ओर सिद्धान्तों – (i) परिवर्जन (Avoidance) एवं (ii) उपचार (Therapy) को भी अपना लिया गया। इस प्रकार पादप रोग प्रबन्धन, निम्नलिखित छः सामान्य सिद्धान्तों पर आधारित होता है–

(1) परिवर्जन (Avoidance)

(2) बहिष्करण (Exclusion)

(3) उन्मूलन (Eradication)

(4) बचाव (Protection)

(5) प्रतिरोधकता (Resistance)

(6) उपचार (Therapy)

इन रोग प्रबन्धन के सामान्य सिद्धान्तों का परिचय निम्न प्रकार है –

(1) परिवर्जन (Avoidance) : इस सिद्धान्त के अन्तर्गत रोग प्रबन्धन के वह उपाय आते हैं जिनके द्वारा ''परपोषी पौधे को रोगजनक के सम्पर्क में आने से बचाया जाता है'', जैसे – भौगोलिक क्षेत्र का चुनाव, खेत का चयन, बुवाई के समय का चुनाव, किस्मों का चुनाव करना इत्यादि उपाय आते हैं।

(2) बहिष्करण (Exclusion) : इस सिद्धान्त के अन्तर्गत वह उपाय आते हैं जिनके द्वारा ''किसी बाह्य रोग को नये क्षेत्र में प्रवेश करने या स्थापित होने से रोका जाता है, जहाँ यह रोग पहले से विद्यमान नहीं है।'' रोगजनक के बहिष्करण के उपायों में पादप संगरोध (Plant quarantine), बीज प्रमाणीकरण, फसल निरीक्षण, रोगजनक मुक्त रोपण सामग्री (Pathogen free stocks) इत्यादि उपाय आते हैं।

पादप संगरोध (Plant quarantine) : ''नये क्षेत्रों में पादप नाशकजीवों एवं रोगों को स्थापित होने में विलम्ब के लिए या बहिष्करण, फैलाव एवं निरोध के उद्देश्य से, कृषि वस्तुओं के आवागमन पर कानूनी प्रतिबन्ध, पादप संगरोध कहलाता है।''

पादप संगरोध के महत्त्व को ध्यान में रखते हुए सन् 1914 में भारत सरकार द्वारा ''विनाशी कीट एवं नाशकजीव अधिनियम'' (Destructive Insects and Pests Act = D.I.P. Act = DIPA) पारित किया गया है। इस अधिनियम के तहत भारत में विदेशों से तथा देश के अन्दर एक राज्य से दूसरे राज्य में विभिन्न पादप व पादप सामग्री के आयात को प्रतिबन्धित किया जाता है ताकि सम्भावित हानिकारक विदेशी कीट, रोगजनकों एवं अन्य नाशक जीवों के भारत में प्रवेश करने एवं आन्तरिक फैलाव के विरूद्ध उपयुक्त उपायों को अपनाकर भविष्य के संकट से बचा जा सके। अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर, भारत में गन्ने को फिजी, ऑस्ट्रेलिया, फिलीपीन्स इत्यादि देशों से मंगवाने पर प्रतिबन्ध है।

इसी प्रकार घरेलू पादप संगरोध (Domestic plant quarantine) के तहत – (i) आलू के कन्दों को आलू के मस्सा रोग (Wart disease of potato) के डर से दार्जिलिंग (पश्चिमी बंगाल) से (ii) आलू के स्वर्णिम सूत्रकृमि (Golden nematode of potato) के डर से आलू के कन्दों को नीलगिरी (तमिलनाडु) से अन्य राज्यों में लाने ले जाने पर प्रतिबन्ध है। इसी प्रकार केले का शीर्ष गुच्छ रोग (Bunchy top of banana) के कारण केले के पौधे के सभी भागों पर असम, केरल, उड़ीसा, बिहार एवं पश्चिमी बंगाल से अन्य सभी राज्यों में ले जाना वर्जित है ताकि यह रोग जहाँ पहले से अनुपस्थित है वहाँ जाकर तबाही न मचा दे।

3. उन्मूलन (Eradication) : इस सिद्धान्त के अन्तर्गत वह उपाय आते हैं जिनके द्वारा किसी क्षेत्र में रोगजनक के स्थापित हो जाने के बाद, उसको उस क्षेत्र से हटाया जाता है। जैसे – कृषण विधियाँ, भौतिक विधियाँ, जैविक विधियाँ एवं रासायनिक विधियों द्वारा।

4. रक्षण / बचाव (Protection) : पौधों को संक्रमित या रोगग्रस्त होने से पहले ही बचाने के उपाय करना, रक्षण / बचाव कहलाता है। जैसे – बीजों को उपचारित करना, रासायनिक छिड़काव या बुरकाव करना, वातावरणीय बदलाव के द्वारा (जैसे – बुवाई व कटाई के समय में बदलाव करना, पौध घरों के पर्यावरण में बदलाव इत्यादि)।

5. प्रतिरोधकता (Resistance) : पौधों में रोग के संक्रमण एवं विकास के विरूद्ध प्रतिरोध उत्पन्न करना, प्रतिरोधकता कहलाती है। इसके अन्तर्गत परपोषी पौधे को दृढ़ बनाकर उसमें ऐसे गुण उत्पन्न किये जाते हैं, जिससे कि वह स्वयं अपने प्रयासों द्वारा अपनी रक्षा कर सके। पौधों में संकरण, चयन, उत्परिवर्तन या आनुवांशिक इंजिनियरिंग द्वारा प्रजातियाँ विकसित करना, जिससे पादप एक या एक से अधिक रोगजनकों के प्रतिरोधी हों। अस्थाई प्रतिरोधकता, रसायन चिकित्सा (Chemotherapy) या पोषण (Nutrition) के द्वारा भी विकसित की जा सकती है।

6. उपचार (Therapy) : रोगी पौधों का इलाज करना या रोग की तीव्रता को कम करना, उपचार कहलाता है। रोगी पौधों का इलाज, रसायन चिकित्सा (Chemotherapy), उष्मा चिकित्सा (Thermotherapy), काट–छाँट (Pruning) एवं शल्य चिकित्सा (Surgery) द्वारा किया जाता है।

पादप रोगों का वर्गीकरण (Classification of plant diseases) :

पादप रोगों के अध्ययन को सरल बनाने हेतु उनको एक निश्चित क्रम में समूह बनाना आवश्यक होता है। पादप रोगों की सही पहचान एवं उनका सटीक नियन्त्रण के लिए वर्गीकरण करना आवश्यक होता है। पादप रोगों का वर्गीकरण निम्न प्रकार से किया जा सकता है:

(1) रोग कारकों के आधार पर (According to causal agents) :

रोगों को उत्पन्न करने वाले रोग कारकों के अनुसार, पादप रोगों का वर्गीकरण करना अत्यधिक उपयोगी होता है। इसका सबसे बड़ा लाभ यह है कि इससे रोग के कारण का पता होने के

साथ–साथ रोग सम्भव विकास एवं फैलाव का भी ज्ञान होता है एवं रोग नियन्त्रण के उचित उपायों को भी सुझाया जा सकता है।

प्रमुख रोग कारकों के आधार पर, पादप रोगों का वर्गीकरण निम्न प्रकार से किया जाता है –

रोगकारक (Disease causing agents)

- **जीवित रोगजनकों द्वारा (Biotic Causes)**
  - (i) कवकों (Fungi) द्वारा उत्पन्न रोग, जैसे – गेहूँ का रोली रोग
  - (ii) जीवाणुओं (Bacteria) द्वारा उत्पन्न रोग, जैसे – नींबू का कैंकर रोग
  - (iii) शैवालों (Algae) द्वारा उत्पन्न रोग, जैसे – चाय का लाल रोली रोग
  - (iv) प्रोटोजोआ (Protozoa) द्वारा उत्पन्न रोग, जैसे – कॉफी का फ्लोएम ऊतकक्षय रोग
  - (v) सूत्रकृमियों (Nematodes) द्वारा उत्पन्न रोग, जैसे – जड़ गाँठ रोग
  - (vi) फाइटोप्लाज्मा (Phytoplasma) द्वारा उत्पन्न रोग, जैसे – बैंगन का छोटी पत्ती रोग
  - (vii) स्पाइरोप्लाज्मा (Spiroplasma) द्वारा उत्पन्न रोग, जैसे – मक्का का स्टंट रोग
  - (viii) परजीवी पुष्पी पौधों (Parasitic flowering plants) द्वारा उत्पन्न रोग, जैसे – अमरबेल
- **मध्यजीवित रोगकारकों द्वारा (Meso-biotic causes)**
  - (i) विषाणु (Virus) द्वारा उत्पन्न रोग, जैसे – तम्बाकू का मोजेक रोग
  - (ii) वाइरॉइड़ (Viroid) द्वारा उत्पन्न रोग, जैसे – आलू का तर्कु कन्द रोग
- **अजीवित कारकों द्वारा (Abiotic Causes)**
  - (i) पोषक तत्त्वों की कमी से उत्पन्न विकार, जैसे – चावल का खैरा रोग (Zn की कमी)
  - (ii) ऑक्सीजन (O_2) की कमी से उत्पन्न विकार, जैसे – आलू का कृष्णान्त हृदय रोग
  - (iii) उच्च या निम्न ताप से उत्पन्न विकार, जैसे – पाला मारना या फलों पर सूरज दाग (Sun scald)
  - (iv) वायु प्रदूषकों द्वारा उत्पन्न विकार, जैसे – आम का काला शिरा रोग (SO_2, CO_2 एवं एसीटिलीन द्वारा)

(2) क्षेत्रफल, उग्रता एवं घटना के आधार पर (According to geographical distribution, severity and occurrence) :

(i) कदाचित/छिटपुट रोग (Sporadic diseases) : ''वह पादप रोग जो अनियमित अन्तरालों पर यदा–कदा तथा कहीं–कहीं पर बहुत थोड़े उदाहरण के रूप में उत्पन्न होते हैं, उन्हें कदाचित/छिटपुट रोग कहते हैं।'' उदाहरण– ककड़ी का कोणीय पत्ती धब्बा रोग (Angular leaf spot of cucumber)।

(ii) स्थानिक रोग (Endemic diseases) : ''वह पादप रोग जो एक विशेष स्थान पर स्थायी रूप से, सामान्य से लेकर उग्र रूप में उपस्थित रहता है, उसे स्थानिक रोग कहते हैं।''

जैसे– (क) आलू का मस्सा रोग– पश्चिमी बंगाल के दार्जिलिंग जिले में।

(ख) आलू का गोल्डन सूत्रकृमि – तमिलनाडु की नीलगिरी पहाड़ियों में।

(iii) महामारी रोग (Epidemic diseases) : ''महामारी'' शब्द का प्रयोग मानव के ऐसे रोगों के लिए किया जाता है जिनसे बहुत सारे लोग एक साथ उग्र रूप से प्रभावित होते हैं। लेकिन पौधों में ऐसे रोगों को ''पादप महामारी'' (Epiphytotic) तथा पशुओं में पशु महामारी (Epizootic) के नाम से जाना जाता है। ''वह रोग जो विस्तृत एवं विनाशकारी रूप में एक बड़े क्षेत्र की फसल पर कभी–कभी या कुछ अन्तराल बाद प्रकट होता है तथा फसल को बहुत अधिक हानि पहुँचाता है, पादप महामारी रोग कहलाता है।'' जैसे – गेहूँ के रोली रोग (Rusts of wheat), गन्ने का लाल सड़न रोग (Red rot of sugarcane), चावल का झौंका रोग (Rice blast) एवं आलू का पछेता झुलसा रोग (Late blight of potato)।

(iv) सर्वव्यापी रोग (Pandemic diseases) : '' ज ब कोई रोग सम्पूर्ण विश्व या किसी समूचे द्वीप या महाद्वीप पर उग्र रूप से फैल जाता है, तब उसे सर्वव्यापी या देशान्तरगामी महामारी (Pandemic) रोग कहा जाता है।'' जैसे – आलू का पछेती अंगमारी रोग (Late blight of potato) एवं गेहूँ का रोली रोग, अनुकूल परिस्थितियों में इस रूप से प्रकट होने का सामर्थ्य रखते हैं।

(3) फसलों के आधार पर (According to crops affected) :

(i) धान्य फसलों के रोग (Diseases of cereals): जैसे – गेहूँ का रोली रोग, जौ का कण्डवा रोग इत्यादि।

(ii) तिलहनी फसलों के रोग (Diseases of oilseed crops) : जैसे – सरसों का सफेद रोली रोग, मूँगफली का टिक्का रोग इत्यादि।

(iii) दलहनी फसलों के रोग (Diseases of pulses): जैसे – चने का उकठा रोग, मूँग का पीला मोजेक रोग इत्यादि।

(iv) सब्जियों के रोग (Diseases of vegetables): जैसे – आलू का पछेता झुलसा रोग, टमाटर का पर्ण कुंचन रोग इत्यादि।

(v) फलों के रोग (Diseases of fruit crops) : जैसे – नींबू का कैंकर रोग, आम का छाछ्या रोग इत्यादि।

(vi) बागान फसलों के रोग (Diseases of plantation crops) : जैसे – चाय का लाल रोली रोग (Algae द्वारा), कॉफी का रोली रोग इत्यादि।

(vii) औषधीय फसलों के रोग (Diseases of medicinal crops) : जैसे – ग्वारपाठे का तना गलन रोग, तुलसी का उकठा रोग इत्यादि।

(4) पोषण न्यूनता विकार (Disorders due to nutritional deficiency):

पौधे की वह विकृति जो किसी अजैविक कारक (Abiotic factor) द्वारा उत्पन्न होती है तथा संक्रमणकारी (Infectious) नहीं होती है, उसे ''विकार'' (Disorder) कहते हैं। तकनीकी रूप से ये ''विकार'' होते हैं, लेकिन आम बोलचाल की भाषा में इनके लिए भी रोग या बीमारी शब्द प्रयोग किया जा रहा है। जबकि रोग तो जैविक या मध्य–जैविक कारकों द्वारा जनित व संक्रामक होता है। पौधों में विकार मुख्य रूप से प्रतिकूल तापमान, प्रकाश, आद्रर्ता एवं ऑक्सीजन तथा वायुमण्डलीय प्रदूषक व पोषक तत्त्वों की न्यूनता व अधिकता से होते हैं।

मृदा में आवश्यक पोषक तत्त्वों की कमी अथवा पौधों को मृदा में इनकी उपस्थिति होने पर भी उपलब्ध न होने के कारण, फसल में भूख के लक्षण (Hunger signs) प्रकट होते हैं। सामान्यतः पौधों में पोषण न्यूनता विकार की वजह से निम्नलिखित विकार उत्पन्न होते हैं, जैसे – जिंक की कमी से ''धान का खैरा रोग'', मैगनीज की कमी से ''जई का धूसर चित्ती रोग'' (Grey speck), कैल्सियम की कमी से ''टमाटर का पुष्पाग्र गलन रोग'' (Blossom end rot), मोलिब्डेनम की कमी से ''फूलगोभी का व्हिपटेल रोग'' (Whiptail of cauliflower) इत्यादि।

(5) ऋतुओं के आधार पर (According to seasons) :

ऋतु विशेष के अनुसार नमी, आद्रता एवं तापमान में बदलाव से कुछ रोग उत्पन्न होते हैं जो बहुत आर्थिक नुकसान पहुँचाते हैं।

(i) वर्षा ऋतु में होने वाले रोग : बाजरा की मृदुरोमिल आसिता, चावल का ब्लास्ट रोग, कपास का जड़ गलन, आर्द्रगलन रोग इत्यादि।

(ii) शरद ऋतु में होने वाले रोग : गेहूँ का रोली रोग, आलू का अंगमारी रोग, स्क्लेरोटीनिया जड़ गलन रोग, सरसों का सफेद रोली, जौ का धारीदार रोग, पाला मारना (Frost damage) इत्यादि।

(iii) ग्रीष्म ऋतु में होने वाले रोग : चारकोल सड़न रोग, सूरज दाग (Sun scald) इत्यादि।

महत्त्वपूर्ण बिन्दु

1. पौधों में कई रोग सूक्ष्मजीवों द्वारा उत्पन्न होते हैं जो प्रमुख रूप से कवक, जीवाणु, सूत्रकृमि एवं फाइटोप्लाज्मा द्वारा जनित होते हैं।
2. कवकों का केन्द्रक सुसंगठित होता है, अतः ये यूकेरियोटिक जीव हैं जिनमें पर्णहरित का पूर्णतया अभाव होता है।
3. अधिकांश कवकों की कोशिका भित्ति काइटीन (Chitin)

की बनी होती है, लेकिन ऊमाइकोटा संघ के कवकों में यह सैलुलोज की बनी होती है।

4. ज्यादातर कवक बहुकोशिकीय होते हैं लेकिन यीस्ट (*Saccharomyces* sp.) एककोशिकीय कवक है।
5. कवकों की प्रत्येक कोशिका में डी.एन.ए., आर.एन.ए., प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट्स, राइबोसोम्स, लिपिड्स इत्यादि होते हैं।
6. कवक का सूकाय (Thallus) अनेक पतली धागेनुमा संरचनाओं से बनता है। एक धागेनुमा संरचना को कवकतन्तु (Hypha) कहते हैं। ये कवकतन्तु मिलकर जालनुमा संरचना बनाते हैं, जिसे कवकजाल (Mycelium) कहते हैं। कवकजाल पटयुक्त (Septate) या पटहीन (Aseptate) होता है।
7. जीवाणु एककोशिकीय, भित्तियुक्त प्रोकेरियोटिक सूक्ष्म जीव होते हैं, जिनकी खोज का श्रेय ल्यूवेनहॉक (1676) को जाता है।
8. जीवाणुओं की कोशिका भित्ति पेप्टीडोग्लाइकन (Peptidoglycan) की बनी होती है।
9. जीवाणुओं में ऊर्जा उत्पादन हेतु माइटोकॉन्ड्रिया नहीं होते, लेकिन इसका कार्य मीजोसोम्स (Mesosomes) निभाते हैं।
10. जीवाणुओं एवं फाइटोप्लाज्मा में केवल 70 S राइबोसोम्स होते हैं।
11. कुछ जीवाणुओं में प्लाज्मिड (Plasmid) भी पाया जाता है।
12. ज्यादातर पादप रोग उत्पन्न करने वाले जीवाणु ग्राम निगेटिव होते हैं। जैसे – जैन्थोमोनास, स्यूड़ोमोनास इत्यादि।
13. जीवाणुओं का सर्वमान्य वर्गीकरण ''बर्गीज मेन्युअल ऑफ सिस्टेमेटिक बेक्टीरियोलॉजी'' (Bergey's Manual of Systematic Bacteriology) में किया गया है।
14. विषाणु एक रासायनिक कण है, न कि कोशिकीय जीव। ये अविकल्पी परजीवी होते हैं।
15. विषाणु न्युक्लिक अम्ल व प्रोटीन के बने होते हैं इसलिए उन्हें न्यूक्लिओप्रोटीन (Nucleoprotein) भी कहते हैं।
16. विषाणु में केवल एक प्रकार का ही न्युक्लिक अम्ल पाया जाता है अर्थात् या तो आर.एन.ए. या डी.एन.ए.। दोनों एक विषाणु में एक साथ कभी नहीं होते हैं।
17. ज्यादातर पादप रोग उत्पन्न करने वाले विषाणुओं में आर.एन.ए. पाया जाता है।
18. विषाणुओं का क्रिस्टलीकरण किया जा सकता है।
19. विषाणुओं के न्युक्लिक अम्ल के चारों ओर प्रोटीन का आवरण होता है जिसको केप्सिड़ कहते हैं।
20. केप्सिड़, न्यूक्लिक अम्ल की रक्षा करता है जबकि न्यूक्लिक अम्ल संक्रमणकारी होता है।
21. पादपों में रोग उत्पन्न करने वाले माइकोप्लाज्मा को पहले ''माइकोप्लाज्मा–सदृश जीव'' (MLO) कहते थे लेकिन अब इन्हें फाइटोप्लाज्मा (Phytoplasma) कहते हैं।
22. भित्ति रहित, एककोशिकीय एवं अकुण्डलित प्रोकेरियोटिक सूक्ष्म जीव जो पौधों में रोग उत्पन्न करते हैं, उन्हें फाइटोप्लाज्मा कहते हैं।
23. फाइटोप्लाज्मा अविकल्पी परजीवी (Obligate parasite) होते हैं जिनको कृत्रिम माध्यम पर नहीं उगाया जा सकता है।
24. फाइटोप्लाज्मा के लिए नया वंश ''केन्डिडेटस फाइटोप्लाज्मा'' प्रतिपादित किया गया है।
25. सूक्ष्म व न्यून अणुभार युक्त, नग्न न्यूक्लिक अम्लीय, संक्रमणकारी कणों को वाइरोइड़ कहते हैं।
26. वाइरोइड़ में प्रोटीन का आवरण नहीं पाया जाता है तथा यह नग्न ssRNA के कण होते हैं।
27. पौधे पर जंगदार स्फोटों का बनना रोली रोग के लक्षण है। स्फोटो के रंग के आधार पर रोली कई प्रकार की हो सकती है, जैसे – गेहूँ की काली रोली, भूरी रोली एवं पीली रोली।
28. पत्तियों की ऊपरी सतह पर ''सफेद चूर्ण जैसी कवकीय वृद्धि'' को चूर्णिल आसिता या छाछ्या रोग कहते हैं, जैसे – एरीसाइफी कवक द्वारा मटर का छाछ्या रोग।
29. पौधे के भागों का शिथिल होते हुए मुरझाकर, अचानक सूख जाना म्लानि या उकठा रोग कहलाता है, जैसे – फ्यूजेरियम कवक द्वारा कपास का म्लानि रोग।
30. पादप रोगों का प्रबन्धन, छः सामान्य सिद्धान्तों (परिवर्जन, बहिष्करण, उन्मूलन, बचाव, प्रतिरोधकता एवं उपचार) पर आधारित होता है।
31. सन् 1914 में भारत सरकार ने ''विनाशी कीट एवं नाशकजीव अधिनियम'' (DIPA, 1914) पारित कर नाशक कीट एवं रोगों को फैलने से रोकने के लिए कानून बनाया।
32. 'आलू के मस्सा रोग को दार्जिलिंग'' तथा ''स्वर्णिम सूत्रकृमि रोग को नीलगिरी'' से फैलने से रोकने हेतु सरकार ने घरेलु पादप संगरोध के तहत प्रतिबन्धित कर रखा है।
33. पादप रोगों को क्षेत्रफल, उग्रता एवं घटना के आधार पर चार भागों (कदाचित रोग, स्थानिक रोग, महामारी रोग एवं सर्वव्यापी रोग) में वर्गीकृत किया गया है।

34. पोषक तत्त्वों की कमी से होने वाले प्रमुख रोगों में जिंक की कमी से धान का खैरा रोग, मोलिब्डेनम की कमी से फूलगोभी का व्हिपटेल रोग, कैल्शियम की कमी से टमाटर का पुष्पाग्र गलन रोग इत्यादि हैं।

अभ्यासार्थ प्रश्न

बहुचयनात्मक प्रश्न

1. अधिकांश कवकों में कोशिका भित्ति किसकी बनी होती है?
   (अ) सेलूलोज (ब) काइटीन
   (स) पेप्टीड़ोग्लाइकन (द) स्टेरोल
2. निम्न में से कौनसा जोड़ा कोशिकीय सूक्ष्म जीवों का नहीं है?
   (अ) कवक, विषाणु
   (ब) जीवाणु, वाइरोइड़
   (स) विषाणु, वाइरोइड़
   (द) फाइटोप्लाज्मा, जीवाणु
3. विषाणु का कौनसा भाग संक्रमणकारी होता है?
   (अ) न्यूक्लिक अम्ल
   (ब) प्रोटीन
   (स) न्यूक्लिक अम्ल व प्रोटीन
   (द) कोई नहीं
4. बैंगन का लघु पत्ती रोग किसके द्वारा होता है?
   (अ) कवक (ब) जीवाणु
   (स) फाइटोप्लाज्मा (द) विषाणु
5. निम्न में से कौनसा रोग अकोशिकीय कारक द्वारा होता है –
   (अ) नींबू का कैंकर
   (ब) गेहूँ का रोली
   (स) तम्बाकू का मोजेक रोग
   (द) सरसों का सफेद रोली रोग
6. भारत में ''विनाशी कीट एवं नाशकजीव अधिनियम'' (DIP Act) कब पारित हुआ?
   (अ) 1814 (ब) 1914
   (स) 1952 (द) 1974

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न –

1. किसी एककोशिकीय कवक का उदाहरण दीजिए।
2. सबसे पहले जीवित कोशिका की खोज किसने की?
3. विषाणु के प्रोटीन आवरण को क्या कहते हैं?
4. भित्ति रहित सूक्ष्म जीव का नाम बताइए।
5. ''माइकोप्लाज्मा–सदृश जीव'' को अब किस नाम से जाना जाता है?
6. पादप विषाणु विज्ञान का जनक किसे कहा जाता है?
7. फाइटोप्लाज्मा पर किस एन्टीबायोटिक का अधिक प्रभाव पड़ता है?
8. नींबू का कैंकर रोग किससे होता है?
9. मृदुरोमिल आसिता रोग करने वाले एक कवक का नाम बताइए।
10. शीर्षारम्भी (डाईबैक) किसे कहते हैं?
11. DIPA का पूरा नाम बताइए।
12. मध्यजीवी रोग कारक कौन–कौनसे हैं?
13. पादप रोग विज्ञान की परिभाषा बताइए।

लघूत्तरात्मक प्रश्न

1. कवकों के कोई पाँच लक्षण लिखिए।
2. जीवाणु को परिभाषित करते हुए किन्हीं दो वंशों के नाम बताइए।
3. वाइरोइड्स पर संक्षिप्त टिप्पणी दीजिए।
4. कवकों में कवकजाल के बारे में लिखिए।
5. कशाभिका विन्यास के आधार पर जीवाणुओं के प्रकार बताइए।
6. बहिष्करण किसे कहते हैं तथा इसके अन्तर्गत कौन–कौनसे उपाय आते हैं?
7. पादप संगरोध किसे कहते हैं तथा भारत में घरेलु पादप संगरोध किन रोगों पर लागू हैं?
8. रोग (Disease) एवं विकार (Disorder) में क्या अन्तर है?
9. विषाणु एवं वाइरोइड़ में अन्तर लिखिए।
10. स्थानिक रोग एवं महामारी रोग को विभेदित कीजिए।
11. जीवाणु एवं फाइटोप्लाज्मा में अन्तर लिखिए।
12. बहिष्करण एवं उन्मूलन में अन्तर लिखिए।
13. मृदुरोमिल आसिता (Downy mildew) एवं चूर्णिल आसिता (Powdery mildew) में विभेद कीजिए?
14. अतिवृद्धि (Hypertrophy) एवं अतिवर्धन (Hyperplasia) को समझाइए।
15. फाइलोडी (Phyllody) को उदाहरण सहित समझाइए।

निबन्धात्मक प्रश्न

1. विषाणु को परिभाषित करते हुए चित्र बनाइए। इनके गुणों का विस्तारपूर्वक वर्णन कीजिए।

2. जीवाणु कोशिका का सचित्र वर्णन कीजिए।
3. फाइटोप्लाज्मा को परिभाषित करते हुए सचित्र वर्णन कीजिए तथा इससे होने वाले दो पादप रोगों के नाम बताइए।
4. पादप रोग प्रबन्धन के सामान्य सिद्धान्त कौन–कौनसे हैं तथा उनको उदाहरण सहित समझाइए?
5. रोग कारकों के आधार पर पादप रोगों का उदाहरण सहित वर्गीकरण दीजिए।

उत्तरमाला :

(1) ब (2) स (3) अ (4) स (5) स (6) ब